M.A. Fourth Semester

Third Paper

Agriculture Geography

BY

Dr. Shivanand Yadav

Assistant professor and Head

Department of Geography

Harishchandra P.G.College ,Varanasi

कृषि-भूगोल के सिद्धान्त एवं मौलिक संकल्पनाएं :-

Principles and fundamental Concepts of Agricultural Geography :-

सिद्धान्त, संकल्पना तथा विषय-वस्तु तीनों पक्ष एक दूसरे से सम्बन्धित एवं अन्तर्सम्बन्धित हैं। जिस प्रकार संकल्पना किसी भी विषय-वस्तु की धुरी होती है, उसी प्रकार सिद्धान्त संकल्पना की धुरी होती है सिद्धान्त संकल्पना की रूप-रेखा को निर्धारित करता है। **मार्गन** तथा **मुन्टन** के मतानुसार कृषि-भूगोल के मौलिक सिद्धान्त एवं संकल्पनाएं आर्थिक-भूगोल के समान हैं। **मार्गन** ने अपनी पुस्तक **कृषि-भूगोल** में मुख्य रूप से चार मौलिक सिद्धान्त एवं संकल्पनाओं का उल्लेख किया है।

(i) **संसाधन उपयोग** (संसाधनों के उपयोग संबंधी सिद्धान्त)

(ii) **तुलनात्मक लाभ** (विकल्पों को नियंत्रित करने वाले नियम)

(iii) **वस्तु विनिमय** (वस्तुओं एवं पूंजी का आदान-प्रदान) तथा

(iv) **संसाधन का अनुकूलित उपयोग** (संसाधनों की कमी के कारण उपलब्ध साधनों का सर्वोत्तम उपयोग की आवश्यकता संबंधी नियम)

डा बृजभूषण (जसबीर) सिंह के अनुसार कृषि भूगोल के तीन मौलिक सिद्धान्त इस प्रकार हैं।

(i) कार्यिक संबंध का सिद्धान्त :- Principle of functional relation

इस सिद्धान्त के अन्तर्गत, कृषि भूगोल का प्रतिरूप क्या है, किस प्रकार के प्रादेशिक स्तर को अभिव्यक्ति होती है? उस क्षेत्र के कृषि भूदृश्य के कार्यिक संबंधों को कैसे निर्धारित किया जाता है? कृषि कार्य कलाप की स्थिति क्या है। विश्व के विभिन्न कृषि प्रदेशों में पारस्परिक कार्यात्मक अन्तर्सम्बन्ध किस रूप में होता है तथा कृषि अर्थव्यवस्था के प्रादेशिक संगठन की अभिव्यक्ति अनेक प्रादेशिक कार्यात्मक अन्योन्य क्रिया के माध्यम से कैसे होती है? पक्ष आते हैं।

(ii) पारिस्थितिक समंजन का सिद्धान्त :- इसके माध्यम से कृषि भूगोल के निम्न पक्षों को समझने में सहायता मिलती है।

Principle of Ecological Adjustment

(a) भौतिक, सांस्कृतिक तथा तकनीकी कारक, फसलों के वितरण प्रतिरूप तथा क्षेत्रीय सम्बद्धता एवं भिन्नता को किस रूप से प्रभावित करते हैं।

(b) अनेक कारकों का सामूहिक तथा आंशिक प्रभाव क्या है?

(c) कृषि-प्रदेश परिसीमन में इन कारकों का क्या योगदान है?

(d) भूदृश्यावली के गत्यात्मक पहलुओं को समझने में कारकीय पक्ष किस प्रकार सहायक हैं?

(iii) क्षेत्रीय-भिन्नता एवं संगठन का सिद्धान्त :- इस सिद्धान्त के आधार पर जिन पक्षों को समझने में सहायता मिलती हैं वे इस प्रकार हैं।

(Principle of Areal differentiation and organisation)

(1) कृषि भू-दृश्य गत्यात्मक है अथवा स्थैतिक।

(2) वर्तमान भू-दृश्य को समझने मे क्रम-विकास का महत्व है या नहीं।

(3) परिवर्तन क्रमबद्ध होते है या नहीं।

(4) कृषि भूदृश्य संरचना, प्रक्रिया तथा अवस्था का प्रतिफल है या नहीं

(5) कृषि-भूदृश्य-भिन्नता तथा परस्पर क्षेत्रीय सम्बद्धता का रूप क्या है

(6) क्षेत्रीय कृषि आर्थिक भिन्नता के कारण कृषि प्रदेशों का प्रादुर्भाव कैसे होता है।

(7) प्रादेशिक कृषि विकास से, भिन्न विभिन्न प्रदेशों का सम्बद्ध एवं संतुलित संसाधन उपयोग कैसे किये जा सकता है।

मौलिक संकल्पनाएं :- संकल्पनाएं अध्ययन-विषयवस्तु को अग्रसारित करती है। ये विषय प्रगति की सूचक होती है। साथ ही साथ विषय की अध्ययन धुरी होती हैं। उपर्युक्त सिद्धान्तो पर आधारित कृषि-भूगोल की मौलिक संकल्पनाए इस प्रकार है :-

(i) भूमि उपयोग की संकल्पना (Concept of landuse)

(ii) कृषि-भूदृश्य की संकल्पना (Concept of Ag. landscape)

(iii) **कृषि-भूदृश्य गत्यात्मक है** :- जिसका निरन्तर परिवर्तन तथा सतत क्रम विकास होता है। कृषि-भूदृश्य की संकल्पना एक गत्यात्मक संकल्पना है। कृषि-भूदृश्य निरन्तर परिवर्तित होता रहता है। परिवर्तन की गति वास्तव में वहाँ के तकनीकी तथा सांस्कृतिक स्तर से निर्धारित होती है। यदि मानव तथा उसकी आर्थिक क्रियाएं अधिक परिवर्तनशील है तो कृषि-भूदृश्य भी उसी दर से परिवर्तित होता है अन्यथा इन तत्वों के अभाव में स्थिर या ह्रासोन्मुख होता है।

(iv) **कृषि-भू-दृश्य संसाधन, संरचना, प्रक्रिया तथा अवस्था का प्रतिफल है** :- किसी निश्चित क्षण स्थैतिक भू-दृश्य विभिन्न तत्वों के अन्तर्सम्बन्ध एवं अन्योन्य क्रिया का प्रतिफल होता है। इन तत्वों में संरचना प्रक्रिया तथा अवस्था का महत्व सर्वोपरि होता है। संरचना से तात्पर्य प्राकृतिक (भूमि, जलवायु, वनस्पति) तथा सांस्कृतिक (स्वयं मानव तथा आर्थिक तंत्र) दोनों प्रकार के संसाधनों से है। कृषि-भूदृश्य के निर्धारण में संरचना आधार-भूत कारक है। प्रक्रिया से आशय भूमि एवं अन्य संसाधन की उपयोग विधियों से है। मानव जीवन काल के समान कृषि भू-दृश्य का भी ऐतिहासिक जीवन काल होता है। सामान्यतया तीन प्रमुख (i) तरुणावस्था (young stage) (मेक्सिको, अर्जे०, ब्राजील) (ii) प्रौढ़ावस्था (Mature stage) (U.S.A. कनाडा, आस्ट्रेलिया, रूस, न्यूजीलैण्ड) तथा (iii) वृद्धावस्था (old stage) (चीन, भारत, ग्रेट ब्रिटेन) अवस्थाएं होती हैं। ये अवस्थाएं संसाधन उपयोग की प्रक्रिया के प्रभावशाली स्तर को प्रदर्शित करती है।

(v) **कृषि-कलाप की अवस्थिति** :— (Location of Ag. Activity) कृषि-भूदृश्य के आन्तरिक विश्लेषण के लिए कृषि कलाप की स्थिति तथा स्थानिक संबंधी संकल्पना महत्वपूर्ण है। कृषि अध्ययन में स्थिति संकल्पना, दूरी संकल्पना पर आधारित होती है। बाजार तथा यातायात साधनों से फार्म की दूरी, नगरीय बसाव, वितरण एवं भूमि उपयोग आवर्त आदि विवेचन से कृषि भू-दृश्य की अनेक आन्तरिक विशेषताओं की जानकारी होती है। अवस्थिति विवेचन में प्रादेशिक एवं वस्तुगत दोनों उपागमों का प्रयोग किया जाता है। उपकल्पित प्रतिमानों के माध्यम से अनुकूलतम स्थिति (कृषि कार्य कलाप) को निर्धारित किया जाता है।

(vi) कृषि प्रदेश संकल्पना तथा क्षेत्रीय भिन्नता एवं संगठन :- ऐसा क्षेत्र जहाँ समान परिस्थितियों के कारण समान प्रकार की कृषि का विकास हुआ हो कृषि प्रदेश कहा जा सकता है। यह संकल्पना स्थानिक समाकलन तथा क्षेत्रीय-विभेदन के सिद्धान्तों पर आधारित है। भिन्न-भिन्न भौतिक तथा सांस्कृतिक प्रक्रियाओं के कारण उनकी (कृषि भूदृश्यकी) परस्पर क्षेत्रीय सम्बद्धता भी भिन्न प्रकार की होती है। इसी भिन्नता तथा समानता सिद्धान्त के आधार पर कृषि प्रदेश का परिसीमन होता है।

विभिन्न देशों में अपनायी गयी कृषि-प्रदेश विभाजन पद्धति भिन्न-भिन्न है। वस्तुतः ये पद्धतियाँ उन देशों के आर्थिक, सांस्कृतिक स्तर एवं परिस्थितियों के अनुकूल होती हैं। उदाहरणार्थ :- भारतवर्ष का कृषि विभाजन शस्य सम्मिश्रण विभाजन है जबकि संसार के उन्नतिशील देशों का कृषि-विभाजन कृषि पद्धति तथा उससे सम्बन्धित उद्यम (Enterprises) पर आधारित है। पद्धति एवं मापदण्ड विश्लेषण कृषि प्रदेश संकल्पना का प्रमुख अंग है।

(vii) क्षेत्रीय एवं अन्तर्क्षेत्रीय संतुलन तथा प्रादेशिक कार्यात्मक अन्योन्य क्रिया :- प्रादेशिक कार्यात्मक अन्तर्सम्बन्ध तथा अन्योन्य क्रिया संबंधी विश्लेषण कृषि भूगोल की एक नवीन तथा महत्वपूर्ण संकल्पना है प्रादेशिक अन्योन्य क्रिया क्षैतिज तथा लम्बवत दोनों स्तरों पर होती है। प्रादेशिक संगठन की अभिव्यक्ति ऐसे अनेक प्रादेशिक कार्यात्मक अन्योन्य क्रिया के माध्यम से होती है। क्षेत्रीय एवं अन्तर्क्षेत्रीय सन्तुलन की संकल्पना कार्यात्मक अन्योन्य क्रिया का ही प्रतिफल है। अनुकूलतम क्षेत्रीय निर्धारण में अनुरेखीय प्रतिमान का प्रयोग आवश्यक होता है। ऐसे अध्ययन के मुख्य दो पहलू होते हैं :-

(i) आय-लागत विश्लेषण Input - output analysis
(ii) क्षेत्रीय सन्तुलन विश्लेषण (Spatial equilibrium analysis)

(viii) प्रादेशिक कृषि विकास एवं प्रयोजना :- प्रादेशिक कृषि-विकास की संकल्पना कृषि भूगोल के व्यावहारिक पक्ष को प्रदर्शित करती है। इस संकल्पना का

मूल-भूत उद्देश्य क्षेत्रीय कृषि अर्थ समन्वयन द्वारा कृषि संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग तथा अधिकतम उत्पादन करने हेतु बल देना विभिन्न क्षेत्रों के कृषि विकास स्तर को निर्धारित करना भी कृषि भूगोल का एक उद्देश्य होता है। प्रादेशिक कृषि विकास के लिए विभिन्न प्रदेशों का सम्बद्ध एवं संतुलित संसाधन उपयोग आवश्यक है जिससे कार्यात्मक अन्योन्य क्रिया तथा क्षेत्रीय कार्यात्मक संगठन समुचित रूप से सम्पन्न हो सके। इस प्रकार कृषि भूगोल के अध्ययन में प्रादेशिक परिप्रेक्ष्य सम्बद्ध कृषि विकास का नियोजन अधिक महत्वपूर्ण होता है।

(iv) **कृषि भू-दृश्य की संकल्पना :-** कृषि-भूमि उपयोग, उपयोग की विधि, उपयोग की व्यवस्था आदि के फलस्वरूप एक विशिष्ट प्रकार की दृश्यावली दिखायी देने लगती है, जिसे कृषि भू-दृश्य कहते हैं। इस प्रकार कृषि के गोचर स्वरूप को बताने के लिए यह दृश्य (शब्द) प्रयोग किया जाता है। कृषि भू-दृश्य आर्थिक-भूदृश्य का अंग है। कृषि भूदृश्य की संकल्पना प्रारूप स्वरूप तथा कृषि पद्धति दोनों दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है। विभिन्न कृषि पद्धतियों के कृषि भूदृश्य में फसल विशेष, संख्या तथा बहुलता भी भिन्न-भिन्न होती है जो वहाँ के भौतिक, सांस्कृतिक तथा तकनीकी पर्यावरण की देन होती है। मानसून एशियाई देशों की जीवन निर्वाहक कृषि पद्धति में धान फसल की प्रधानता तथा पश्चिमी देशों की व्यावसायिक कृषि पद्धति में गेहूँ की प्रधानता इस तथ्य का महत्वपूर्ण उदाहरण है। कृषि के समग्र स्वरूप को व्यक्त करने के लिए यह संकल्पना प्रयोग की जाती है। फलतः कृषि-भूदृश्य भी परिवर्तनशील है।

(v) **भूमि उपयोग की संकल्पना :-** भूमि उपयोग स्वतः स्पष्ट है लेकिन अंग्रेजी में इस हेतु दो शब्दों के प्रयोग से भ्रम उत्पन्न होता है। प्रथम शब्द use (प्रयोग) तथा दूसरा utilization (उपयोग) है। 'प्रयोग' शब्द का प्रयोग भूमि के वृहद् उपयोगों को व्यक्त करने के लिये किया जाता है जैसे : भूमि का कृषि के लिए प्रयोग या नगर अधिवास आदि के लिए प्रयोग। परन्तु भूमि के उपयोग को अधिक विस्तार से बताने के लिए 'भूमि उपयोग' शब्द का प्रयोग किया

जाता है। जैसे कृषि के लिए प्रयोग की जाने वाली भूमि का उपयोग फसलोत्पादन और पशुचारण के लिए हो सकता है। इन्हीं से सम्बन्धित भूमि उपयोग की गहनता अथवा कृषि भूमि प्रयोग शब्द है। शस्य की गहनता भी इसी से मिलती-जुलती संकल्पना है।

⇒ **कृषि भूगोल का अध्ययन उपागम :-** आर्थिक-भूगोल के समान कृषि-भूगोल में सामान्यतया तीन उपागमों को अपनाया जाता है।

(i) **सामान्य विषय वस्तुगत उपागम या क्रमबद्ध उपागम :** Systematic Approach :-

कृषि से सम्बन्धित किसी भी पक्ष की सामान्य विशेषताओं का अध्ययन सामान्य विषय वस्तुगत उपागम से होता है, सर्वप्रथम कृषि से सम्बन्धित सभी पक्षों का विश्लेषण अनिवार्य होगा। इसमें प्रादेशिक विभाजन के आधार पर विश्लेषण नहीं किया जाता है।

(ii) **प्रादेशिक उपागम :-** Regional approach :- प्रादेशिक उपागम में सर्वप्रथम अध्ययन इकाई को कृषि-प्रदेशों में विभक्त किया जाता है। तत्पश्चात एक प्रदेश में सभी फसलों के वितरण तथा उनके संबंधों का अलग-अलग विश्लेषण किया जाता है।

(iii) **सैद्धान्तिक उपागम :-** Theoratical Approach :- सैद्धान्तिक उपागम में कृषि संबंधी विशेषताओं का विश्लेषण प्रायोगिक सिद्धान्तों के स्वरूप (सन्दर्भ) में किया जाता है। जिसका मुख्य उद्देश्य सिद्धान्तों की व्याख्या करना होता है। सैद्धान्तिक उपागम में कृषि के स्थानीकरण, उसके वर्गीकरण तथा वितरण की व्याख्या के नियम तथा सिद्धान्तों के प्रतिपादन पर जोर दिया जाता है।

⇒ **कृषि-भूगोल की अध्ययन विधियाँ :-** कृषि-भूगोल की अध्ययन प्रणाली पहले से ही वर्णन, विभाजन तथा व्याख्या से सम्बन्धित रही है। दूसरे शब्दों में इसे **आगमन विधि** कहा जाता है। (Inductive Method) इस प्रकार का अध्ययन आगमन तर्क पर आधारित होता है। जिसमें अनुभव तथा पर्यवेक्षण विधि का प्रयोग किया जाता है संक्षेप में, स्वरूपों को व्यक्तिगत रूप से देखकर वर्णन किया जाता है।

अध्ययन की दूसरी विधि को निगमन विधि (Deductive method) कहते हैं इसमें पहले उपकल्पित धारणाओं को विकसित किया जाता है। तत्पश्चात वास्तविक आँकड़ो की परीक्षा की जाती है। यह विधि आधुनिकतम है जो कृषि भूगोल के अध्ययन में हाल ही में अपनायी गयी है। यह कृषि भूगोल की नूतन प्रवृत्ति है।

कृषि-भूगोल अध्ययन के अनेक पहलू :- (i) उत्पादन अवस्थिति तथा निर्णय प्रक्रिया।

(ii) कृषि भूदृश्य तथा भौतिक-सांस्कृतिक एवं तकनीकी पर्यावरण

(iii) कृषि-भूदृश्यावली का गत्यात्मक स्वरूप तथा प्रक्रिया, अवस्था एवं संरचना का अध्ययन।

(iv) क्षेत्रीय कार्यिक अन्तर्सम्बन्ध।

(v) वितरण प्रतिरूप में भिन्नता असमानता एवं परस्पर क्षेत्रीय सम्बन्ध तथा कार्यकारण विश्लेषण।

(vi) प्रादेशिक कृषि विकास एवं नियोजन।

कृषि-भूगोल का महत्व :- कृषि-भूगोल अध्ययन का सर्वाधिक महत्व इस रूप में है कि इससे नियोजकों को विशेष निर्देश एवं दिशा मिलती है। उदाहरणार्थ :-

(क) कृषि-विशेषज्ञ जो कृषिगत संरचना में सुधार लाना चाहते हैं।

(ख) खाद्य अर्थ-शास्त्री जो खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि करना चाहते हैं।

(ग) सिंचाई इन्जीनियर जो सिंचाई योजनाओं को लागू करना चाहते हैं।

(घ) प्रादेशिक नियोजक जो प्रादेशिक आर्थिक विकास में कृषि विकास को धुरी मानते हैं।

(ङ) जनांकिकी नियोजक जो अनेक सामाजिक सुविधा सेवाओं की अवस्थापना करना चाहते हैं।

(च) ग्रामीण विकास नियोजक जो समन्वित ग्रामीण विकास के नियोजन में कृषिगत कार्यों को ग्रामीण विकास की केन्द्र बिन्दु मानते हैं।

(छ) कृषि उद्योग नियोजक जो क्षेत्रीय विकास में कृषि-उद्योगों की स्थापना को वरीयता का समर्थन करते हैं।